मजदूरों-किसानों का राजधानी दिल्ली में महापड़ाव : पूंजीपति-परस्त नीतियों को हराने का आह्वान

केन्द्र सरकार की मजदूर-किसान और जन विरोधी और राष्ट्र विरोधी नीतियों के खिलाफ़ संघर्ष का ऐलान

सत्यवीर

केंद्रीय ट्रेड यूनियनों/फेडरेशनों के संयुक्त मंच और संयुक्त किसान मोर्चा की अगुवाई में 26-27 नवम्बर को नई दिल्ली के सिविल लाइंस स्थित उपराज्यपाल के कार्यालय के सामने तथा 28 नवम्बर को संसद के सामने जंतर-मंतर पर सफलतापूर्वक महापड़ाव का आयोजन किया गया।

महापड़ाव में मजदूर और किसानों ने बढ़चढ़कर हिस्सेदारी की। साथ ही अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्र के मजदूरों सहित महिलाओं और छात्रों ने हिस्सा लिया। सभा को संबोधित करते हुए वक्ताओं ने श्रमिकों, किसानों और व्यापक कामकाजी लोगों की रोजी-रोटी और अधिकारों पर हो रहे हमलों की घोर निंदा की। रेलवे, बंदरगाहों-गोदी, बिजली, हवाई अड्डों, राजमार्गों, बैंकिंग, रक्षा कारखानों आदि के निजीकरण के मजदूर विरोधी, समाज विरोधी कार्यक्रम की निंदा की गई। वक्ताओं ने चार श्रमिक विरोधी श्रम संहिताओं को निरस्त करने, सभी के लिए सामाजिक सुरक्षा, बिजली (संशोधन) विधेयक 2022 को वापस लिए जाने, ठेकादारी को समाप्त किए जाने और सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों के निजीकरण को रोके जाने की मांग को लेकर संघर्ष को निरंतर चलाने का प्रण लिया। केंद्र सरकार से लाभकारी मूल्य पर सभी कृषि उपज की राज्य द्वारा गारंटीकृत खरीद सुनिश्चित करने की भी मांग की गई।

ट्रेड यूनियनों और किसान संगठनों ने भी मांग की है कि गिग श्रमिकों, आशा और आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं और अन्य योजना श्रमिकों को श्रमिक के रूप में मान्यता दी जाए। महापड़ाव को संबोधित करने वालों में थे - एटक से अमरजीत कौर, शिवकुमार दामले तथा विजय कुमार तिवारी, राज्यसभा सदस्य सिवदावन, सीटू से हेमलता, आशा शर्मा तथा विरेन्द्र गौड़, मजदूर एकता कमेटी से बिरजू नायक तथा लोकेश कुमार, यूटीयूसी से आरएस डागर तथा शत्रुजीत सिंह, एआईसीसीटीयू से राजीव डिमरी, सुचेता डे तथ श्वेता, एआईयूटीयूसी से आर.के. शर्मा तथा मैनेजर चौरसिया, एलपीएफ से जवाहर सिंह, आईसीटीयू से नरेन्द्र तथा श्रीनाथ, हिन्द मजदूर सभा से नारायण सिंह तथा राकेश, सेवा से लता और सुभद्रा, क्रांतिकारी मजदूर मोर्चा से सत्यवीर तथा नरेश, दिल्ली प्रदेश रेहड़ी पटरी खोमचा हाकर्स यूनियन से शकील अहमद, आल इंडिया किसान महासभा से पुरुषोत्तम शर्मा, अखिल भारतीय जनवादी महिला समिति से मरियम धावले, मैमूना, किसान मजदूर उत्थान मोर्चा से रमेश ढाका, आल इंडिया सेव एजुकेशन कमेटी से शारदा दीक्षित, दिल्ली विश्वविद्यालय एसी एसटी इंप्लाइज यूनियन से केदार, दिल्ली पल्लेदार यूनियन से हरबंस राय, कंस्ट्रक्शन वर्कर्स यूनियन से सुरेश, दिल्ली आंगनवाड़ी वर्कर्स एंड हैल्पर्स यूनियन से कमला आदि।

संयुक्त किसान मोर्चा से कृष्णा प्रसाद, राजवीर सिंह, महावीर सिंह आर्या, डा. शमशेर सिंह, रामुकमार सोलंकी, सुबेदार चरणसिंह, जगवीर नम्बरदार, आदि ने बात रखी। महापड़ाव के दौरान, जन

नाट्य मंच, संगवारी, सांस्कृतिक पहल, सेवा तथा निर्माण मजदूर पंचायत संगम के साथियों ने नाटक, गीत, कविताओं व नारों के के जरिए महापड़ाव में जोश बनाए रखा।

क्रिकेट विश्वकप ने ताजा कर दी हिटलर के समय के जर्मन ओलंपिक खेलों की यादें

स्वदेश कुमार सिन्हा

किसी देश में जब कोई फासीवादी शासक या शासन व्यवस्था आती है, तो उसकी अभिव्यक्ति समाज, साहित्य और संस्कृति हर क्षेत्र में देखने को मिलती है। खेल भी इससे अछूते नहीं रहते हैं। भारत में हुए विश्वकप क्रिकेट के फाइनल में भारत को ऑस्ट्रेलिया के हाथों पराजय मिली, उसमें इसकी अभिव्यक्ति साफ़-साफ़ देखी जा सकती है। खेलों को शान्ति, सद्भावना और विश्वबन्धुत्व का प्रतीक माना जाता है, लेकिन अगर इसे भी फासीवादी शासक अपने एजेंडे को आगे बढ़ाने के लिए करें, तो इसके परिणाम विनाशकारी सिद्ध हो सकते हैं, इसका सबसे क्लासिक उदाहरण- 1936 में जर्मनी की राजधानी बर्लिन में आयोजित ओलम्पिक खेल थे।

1933 में हिटलर के नेतृत्व में जर्मनी में नाज़ी पार्टी सत्ता में आ गई थी। पूरे जर्मनी में बहुत तेजी से अल्पसंख्यक यहूदियों के ख़िलाफ़ घृणा का प्रचार हो रहा था, उनके ख़िलाफ़ दमनचक्र चलाया जा रहा था तथा यहूदी खिलाड़ियों को खेल क्लबों से निकाला जा रहा था, इसी माहौल में 1936 में बर्लिन में ओलम्पिक खेल का आयोजन किया गया था। ऐसा माना जाता है कि इस ओलम्पिक का प्रयोग हिटलर ने नाज़ी श्रेष्ठता के सिद्धांत वाली विचारधारा के प्रचार-प्रसार के लिए किया था।

इस ओलम्पिक में आर्य जाति की श्रेष्ठता के सिद्धांत के बारे में पर्चे बांटे जा रहे थे और भाषण दिए जा रहे थे। नवनिर्मित खेल स्टेडियम; जो 325 एकड़ में फैले थे, उसके बारे में ऐसा बताया जाता है, उनकी संरचना इस तरह की गई थी, कि वे भविष्य में किसी महायुद्ध में सैनिक शिविर के रूप मे काम कर सकें। ये सारे स्टेडियम नाज़ी प्रतीकों, बैनरों और झंडों से भरे हुए थे। इन्हीं नस्लवादी नीतियों के कारण इन खेलों के बहिष्कार के बारे में अंतर्राष्ट्रीय बहस छिड़ गई थी। बड़े पैमाने पर बहिष्कार के डर से अंतर्राष्ट्रीय ओलम्पिक समिति ने जर्मन सरकार पर दबाव डालकर यह आश्वासन लिया, कि योग्य जर्मन यहूदी खिलाड़ियों को जर्मन टीम में शामिल किया जाएगा और खेलों का प्रयोग नाज़ी विचारधारा को बढ़ावा देने के लिए नहीं किया जाएगा, हालांकि एडाल्फ हिटलर की नाज़ी सरकार ने अपने वादों को पूरा नहीं किया। यहूदी मूल की केवल एक महिला खिलाड़ी हेलेन मेयर ने जर्मन टीम की ओर से तलवारबाज़ी प्रतियोगिता में हिस्सा लिया था।

हालांकि इन खेलों में अमेरिकी मूल के नीग्रो खिलाड़ी जेसी ओवेन्स ट्रैक एण्ड फील्ड प्रतियोगिता में अमेरिका के लिए चार स्वर्ण पदक जीतकर हिटलर द्वारा प्रतिपादित शुद्ध आर्यरक्त के सिद्धांत को एक तरह से चुनौती दे डाली। ऐसा कहा जाता है, कि स्वर्ण पदक जीतने पर हिटलर ने जेसी ओवेन्स से हाथ तक नहीं मिलाया।

इसी ओलम्पिक खेल में भारतीय हॉकी टीम ने मेजर ध्यानचंद्र के नेतृत्व में हॉकी में जर्मनी को भारी अंतर से हराकर स्वर्ण पदक जीता था, यद्यपि इस ओलम्पिक खेल में जर्मनी पहले स्थान पर रहा था। इस ओलम्पिक में बड़े पैमाने पर अफ्रीकी मूल के काले नीग्रो खिलाड़ियों ने अमेरिका और अन्य देशों की ओर भाग लेकर तथा स्वर्ण पदक जीतकर इस सिद्धांत को चुनौती दी, कि तथाकथित शुद्ध आर्यरक्त के लोग ही दुनिया में श्रेष्ठ हैं।

इन खेलों के बारे में अनेक समाजशास्त्रियों ने लिखा है कि इन ओलम्पिक खेलों के माध्यम से जिस तरह से जर्मन जनता में यहूदियों एवं अन्य अल्पसंख्यकों; विशेष रूप से रोमा समुदाय के ख़िलाफ़ नफ़रत का प्रचार-प्रसार किया गया था, वह भविष्य में बहुत विनाशकारी सिद्ध हुआ। ढेरों रोमा समुदाय के लोगों को इन खेलों के दौरान नज़रबंद कर दिया गया था। खेलों के दौरान हिटलर की उपस्थिति में स्टेडियम में भारी उन्मादित भीड़ नाज़ी झंडों और प्रतीकों के साथ खुलेआम नस्लवादी नारे लगाती रही। अंतर्राष्ट्रीय समिति को दिए गए आश्वासनों के बावजूद जर्मन सरकार ने इसको रोकने का कोई प्रयास नहीं किया।

क्या हम 1936 के नाज़ी शासन के दौरान नस्लवादी उन्माद से भारत में क्रिकेट विश्वकप के दौरान हुए उन्माद से इसकी तुलना कर सकते हैं? वास्तव में इतिहास अपने को अपने पुराने रूप में नहीं दोहराता है, उसके नये-नये रूप और संस्करण पैदा होते हैं। जर्मन फासीवाद के दौर में इलेक्ट्रॉनिक मीडिया या कहें इंटरनेट का कोई प्रचार-प्रसार नहीं था। आज कोई भी फासीवादी शासक इन माध्यमों पर क़ब्ज़ा करके अपनी फासीवादी नीतियों का प्रचार-प्रसार बहुत आसानी से सारे देश में कर सकता है।

क्रिकेट विश्वकप में एक तरह से अंधराष्ट्रवादी उन्माद फैलाने का इन माध्यमों का भरपूर इस्तेमाल किया गया। मीडिया ने इस विश्वकप को महायुद्ध की संज्ञा तक दे डाली। अहमदाबाद के नरेन्द्र मोदी क्रिकेट स्टेडियम में जिस तरह से; चाहे पाकिस्तान के ख़िलाफ़ लीग मैच हो या फिर इसी स्टेडियम में ऑस्ट्रेलिया के ख़िलाफ़ क्रिकेट का फाइनल मैच हो, इसमें जिस तरह से उन्मादित भीड़ धार्मिक नारे लगाकर अन्य देशों के खिलाड़ियों को हूटकर रही थी, यह अपने आप में बहुत अभूतपूर्व और शर्मनाक था तथा इस तरह की घटना सम्भवत: भारतीय क्रिकेट के इतिहास में पहले घटित नहीं हुई थी तथा यह सब हुआ देश के प्रधानमंत्री और गृहमंत्री की उपस्थिति में।

इस उन्माद का प्रसारण जिस तरह इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने सारे देश में किया, उसने इस तरह का उन्माद सारे देश में पैदा कर दिया था। ऐसा भी कहा जाता है कि इस विश्वकप में अगर भारतीय टीम को विजय मिलती, तो भाजपा इसका प्रयोग राज्यों में हो रहे विधानसभा चुनाव में प्रधानमंत्री की छवि चमकाने के लिए करती। ऑस्ट्रेलिया की क्रिकेट टीम को विश्वकप की ट्राफी देते समय प्रधानमंत्री के चेहरे पर दिख रही निराशा इस तथ्य को बहुत अच्छी तरह से उजागर करती है।

खेलों में हार-जीत होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, लेकिन अगर इसे एक अंधराष्ट्रवादी उन्मादी विमर्श में बदल दिया जाए, तो यह फासीवादी शासन व्यवस्था की सेवा करने वाला एक अंग बन जाता है, जिसे हमने पहले जर्मनी में देखा था और अब भारत में देख रहे हैं। इसका हर स्तर पर विरोध किया जाना चाहिए।

(स्वदेश कुमार सिन्हा स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं।)